

दशमोऽध्यायः

शुम्भ-वध

ध्यानम्

ॐ उत्तप्तहेमरुचिरां रविचन्द्रवह्नि-

नेत्रां धनुश्शरयुताङ्कुशपाशशूलम् ।
रम्यैर्भुजैश्च दधतीं शिवशक्तिरूपां
कामेश्वरीं हृदि भजामि धृतेन्दुलेखाम् ॥

‘ॐ’ ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

निशुम्भं निहतं दृष्ट्वा भ्रातरं प्राणसम्मितम् ।
हन्यमानं बलं चैव शुम्भः क्रुद्धोऽब्रवीद्वचः ॥ २ ॥
बलावलेपाद्दुष्टे* त्वं मा दुर्गे गर्वमावह ।
अन्यासां बलमाश्रित्य युद्धयसे यातिमानिनी ॥ ३ ॥

मैं मस्तकपर अर्धचन्द्र धारण करनेवाली शिवशक्तिस्वरूपा भगवती कामेश्वरीका हृदयमें चिन्तन करता हूँ। वे तपाये हुए सुवर्णके समान सुन्दर हैं। सूर्य, चन्द्रमा और अग्नि—ये ही तीन उनके नेत्र हैं तथा वे अपने मनोहर हाथोंमें धनुष-बाण, अंकुश, पाश और शूल धारण किये हुए हैं।

ऋषि कहते हैं— ॥ १ ॥ राजन्! अपने प्राणोंके समान प्यारे भाई निशुम्भको मारा गया देख तथा सारी सेनाका संहार होता जान शुम्भने कुपित होकर कहा— ॥ २ ॥ ‘दुष्ट दुर्गे! तू बलके अभिमानमें आकर झूठ-मूठका घमंड न दिखा। तू बड़ी मानिनी बनी हुई है, किंतु दूसरी स्त्रियोंके बलका सहारा लेकर लड़ती है’ ॥ ३ ॥

देव्युवाच ॥ ४ ॥

एकैवाहं जगत्यत्र द्वितीया का ममापरा ।
पश्यैता दुष्ट मय्येव विशन्त्यो मद्विभूतयः * ॥ ५ ॥
ततः समस्तास्ता देव्यो ब्रह्माणीप्रमुखा लयम् ।
तस्या देव्यास्तनौ जग्मुरेकैवासीत्तदाम्बिका ॥ ६ ॥

देव्युवाच ॥ ७ ॥

अहं विभूत्या बहुभिरिह रूपैर्यदास्थिता ।
तत्संहतं मयैकैव तिष्ठाम्याजौ स्थिरो भव ॥ ८ ॥

ऋषिरुवाच ॥ ९ ॥

ततः प्रववृते युद्धं देव्याः शुम्भस्य चोभयोः ।
पश्यतां सर्वदेवानामसुराणां च दारुणम् ॥ १० ॥
शरवर्षैः शितैः शस्त्रैस्तथास्त्रैश्चैव दारुणैः ।
तयोर्युद्धमभूद्भूयः सर्वलोकभयङ्करम् ॥ ११ ॥

देवी बोलीं— ॥ ४ ॥ ओ दुष्ट! मैं अकेली ही हूँ। इस संसारमें मेरे सिवा दूसरी कौन है? देख, ये मेरी ही विभूतियाँ हैं, अतः मुझमें ही प्रवेश कर रही हैं ॥ ५ ॥

तदनन्तर ब्रह्माणी आदि समस्त देवियाँ अम्बिकादेवीके शरीरमें लीन हो गयीं। उस समय केवल अम्बिकादेवी ही रह गयीं ॥ ६ ॥

देवी बोलीं— ॥ ७ ॥ मैं अपनी ऐश्वर्यशक्तिसे अनेक रूपोंमें यहाँ उपस्थित हुई थी। उन सब रूपोंको मैंने समेट लिया। अब अकेली ही युद्धमें खड़ी हूँ। तुम भी स्थिर हो जाओ ॥ ८ ॥

ऋषि कहते हैं— ॥ ९ ॥ तदनन्तर देवी और शुम्भ दोनोंमें सब देवताओं तथा दानवोंके देखते-देखते भयंकर युद्ध छिड़ गया ॥ १० ॥ बाणोंकी वर्षा तथा तीखे शस्त्रों एवं दारुण अस्त्रोंके प्रहारके कारण उन दोनोंका युद्ध सब लोगोंके लिये बड़ा भयानक प्रतीत हुआ ॥ ११ ॥

* इसके बाद किसी-किसी प्रतिमें 'ऋषिरुवाच' इतना अधिक पाठ है।

दिव्यान्यस्त्राणि शतशो मुमुचे यान्यथाम्बिका ।
 बभञ्ज तानि दैत्येन्द्रस्तत्प्रतीघातकर्तृभिः ॥ १२ ॥
 मुक्तानि तेन चास्त्राणि दिव्यानि परमेश्वरी ।
 बभञ्ज लीलयैवोग्रहुङ्कारोच्चारणादिभिः ॥ १३ ॥
 ततः शरशतैर्देवीमाच्छादयत सोऽसुरः ।
 सापि^१ तत्कुपिता देवी धनुश्चिच्छेद चेषुभिः ॥ १४ ॥
 छिन्ने धनुषि दैत्येन्द्रस्तथा शक्तिमथाददे ।
 चिच्छेद देवी चक्रेण तामप्यस्य करे स्थिताम् ॥ १५ ॥
 ततः खड्गमुपादाय शतचन्द्रं च भानुमत् ।
 अभ्यधावत्तदा^२ देवीं दैत्यानामधिपेश्वरः ॥ १६ ॥
 तस्यापतत एवाशु खड्गं चिच्छेद चण्डिका ।
 धनुर्मुक्तैः शितैर्बाणैश्चर्म चार्ककरामलम्^३ ॥ १७ ॥

उस समय अम्बिकादेवीने जो सैकड़ों दिव्य अस्त्र छोड़े, उन्हें दैत्यराज शुम्भने उनके निवारक अस्त्रोंद्वारा काट डाला ॥ १२ ॥ इसी प्रकार शुम्भने भी जो दिव्य अस्त्र चलाये; उन्हें परमेश्वरीने भयंकर हुंकार शब्दके उच्चारण आदिद्वारा खिलवाड़में ही नष्ट कर डाला ॥ १३ ॥ तब उस असुरने सैकड़ों बाणोंसे देवीको आच्छादित कर दिया। यह देख क्रोधमें भरी हुई उन देवीने भी बाण मारकर उसका धनुष काट डाला ॥ १४ ॥ धनुष कट जानेपर फिर दैत्यराजने शक्ति हाथमें ली, किंतु देवीने चक्रसे उसके हाथकी शक्तिको भी काट गिराया ॥ १५ ॥ तत्पश्चात् दैत्योंके स्वामी शुम्भने सौ चाँदवाली चमकती हुई ढाल और तलवार हाथमें ले उस समय देवीपर धावा किया ॥ १६ ॥ उसके आते ही चण्डिकाने अपने धनुषसे छोड़े हुए तीखे बाणोंद्वारा उसकी सूर्य-किरणोंके समान उज्ज्वल ढाल और तलवारको तुरंत काट दिया ॥ १७ ॥

१. पा०—हू०। २. पा०—सा च। ३. पा०—वत तां हन्तुं दैत्या०। ४. इसके बाद किसी-किसी प्रतिमें—‘अश्वांश्च पातयामास रथं सारथिना सह।’ इतना अधिक पाठ है।

हताश्वः स तदा दैत्यश्छिन्नधन्वा विसारथिः ।
 जग्राह मुद्गरं घोरमम्बिकानिधनोद्यतः ॥ १८ ॥
 चिच्छेदापततस्तस्य मुद्गरं निशितैः शरैः ।
 तथापि सोऽभ्यधावत्तां मुष्टिमुद्यम्य वेगवान् ॥ १९ ॥
 स मुष्टिं पातयामास हृदये दैत्यपुङ्गवः ।
 देव्यास्तं चापि सा देवी तलेनोरस्यताडयत् ॥ २० ॥
 तलप्रहाराभिहतो निपपात महीतले ।
 स दैत्यराजः सहसा पुनरेव तथोत्थितः ॥ २१ ॥
 उत्पत्य च प्रगृह्योच्चैर्देवीं गगनमास्थितः ।
 तत्रापि सा निराधारा युयुधे तेन चण्डिका ॥ २२ ॥
 नियुद्धं खे तदा दैत्यश्चण्डिका च परस्परम् ।
 चक्रतुः प्रथमं सिद्धमुनिविस्मयकारकम् ॥ २३ ॥

फिर उस दैत्यके घोड़े और सारथि मारे गये, धनुष तो पहले ही कट चुका था, अब उसने अम्बिकाको मारनेके लिये उद्यत हो भयंकर मुद्गर हाथमें लिया ॥ १८ ॥ उसे आते देख देवीने अपने तीक्ष्ण बाणोंसे उसका मुद्गर भी काट डाला, तिसपर भी वह असुर मुक्का तानकर बड़े वेगसे देवीकी ओर झपटा ॥ १९ ॥ उस दैत्यराजने देवीकी छातीमें मुक्का मारा, तब उन देवीने भी उसकी छातीमें एक चाँटा जड़ दिया ॥ २० ॥ देवीका थप्पड़ खाकर दैत्यराज शुम्भ पृथ्वीपर गिर पड़ा, किंतु पुनः सहसा पूर्ववत् उठकर खड़ा हो गया ॥ २१ ॥ फिर वह उछला और देवीको ऊपर ले जाकर आकाशमें खड़ा हो गया; तब चण्डिका आकाशमें भी बिना किसी आधारके ही शुम्भके साथ युद्ध करने लगीं ॥ २२ ॥ उस समय दैत्य और चण्डिका आकाशमें एक-दूसरेसे लड़ने लगे। उनका वह युद्ध पहले सिद्ध और मुनियोंको विस्मयमें डालनेवाला हुआ ॥ २३ ॥

ततो नियुद्धं सुचिरं कृत्वा तेनाम्बिका सह ।
 उत्पात्य भ्रामयामास चिक्षेप धरणीतले ॥ २४ ॥
 स क्षिप्तो धरणीं प्राप्य मुष्टिमुद्यम्य वेगितः * ।
 अभ्यधावत दुष्टात्मा चण्डिकानिधनेच्छया ॥ २५ ॥
 तमायान्तं ततो देवी सर्वदैत्यजनेश्वरम् ।
 जगत्यां पातयामास भित्त्वा शूलेन वक्षसि ॥ २६ ॥
 स गतासुः पपातोर्व्यां देवीशूलाग्रविक्षतः ।
 चालयन् सकलां पृथ्वीं साब्धिद्वीपां सपर्वताम् ॥ २७ ॥
 ततः प्रसन्नमखिलं हते तस्मिन् दुरात्मनि ।
 जगत्स्वास्थ्यमतीवाप निर्मलं चाभवन्नभः ॥ २८ ॥
 उत्पातमेघाः सोल्का ये प्रागासंस्ते शमं ययुः ।
 सरितो मार्गवाहिन्यस्तथासंस्तत्र पातिते ॥ २९ ॥

फिर अम्बिकाने शुम्भके साथ बहुत देरतक युद्ध करनेके पश्चात् उसे उठाकर घुमाया और पृथ्वीपर पटक दिया ॥ २४ ॥ पटके जानेपर पृथ्वीपर आनेके बाद वह दुष्टात्मा दैत्य पुनः चण्डिकाका वध करनेके लिये उनकी ओर बढ़े वेगसे दौड़ा ॥ २५ ॥ तब समस्त दैत्योंके राजा शुम्भको अपनी ओर आते देख देवीने त्रिशूलसे उसकी छाती छेदकर उसे पृथ्वीपर गिरा दिया ॥ २६ ॥ देवीके शूलकी धारसे घायल होनेपर उसके प्राण-पखेरू उड़ गये और वह समुद्रों, द्वीपों तथा पर्वतोंसहित समूची पृथ्वीको कँपाता हुआ भूमिपर गिर पड़ा ॥ २७ ॥ तदनन्तर उस दुरात्माके मारे जानेपर सम्पूर्ण जगत् प्रसन्न एवं पूर्ण स्वस्थ हो गया तथा आकाश स्वच्छ दिखायी देने लगा ॥ २८ ॥ पहले जो उत्पातसूचक मेघ और उल्कापात होते थे, वे सब शान्त हो गये तथा उस दैत्यके मारे जानेपर नदियाँ भी ठीक मार्गसे बहने लगीं ॥ २९ ॥

ततो देवगणाः सर्वे हर्षनिर्भरमानसाः ।
 बभूवुर्निहते तस्मिन् गन्धर्वा ललितं जगुः ॥ ३० ॥
 अवादयंस्तथैवान्ये ननृतुश्चाप्सरोगणाः ।
 ववुः पुण्यास्तथा वाताः सुप्रभोऽभूद्विवाकरः ॥ ३१ ॥
 जज्वलुश्चाग्नयः शान्ताः शान्ता दिग्जनितस्वनाः ॥ ॐ ॥ ३२ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये

शुम्भवधो नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

उवाच ४, अर्धश्लोकः १, श्लोकाः २७, एवम् ३२,

एवमादितः ५७५ ॥

उस समय शुम्भकी मृत्युके बाद सम्पूर्ण देवताओंका हृदय हर्षसे भर गया और गन्धर्वगण मधुर गीत गाने लगे ॥ ३० ॥ दूसरे गन्धर्व बाजे बजाने लगे और अप्सराएँ नाचने लगीं। पवित्र वायु बहने लगी। सूर्यकी प्रभा उत्तम हो गयी ॥ ३१ ॥ अग्निशालाकी बुझी हुई आग अपने-आप प्रज्वलित हो उठी तथा सम्पूर्ण दिशाओंके भयंकर शब्द शान्त हो गये ॥ ३२ ॥

इस प्रकार श्रीमार्कण्डेयपुराणमें सावर्णिक मन्वन्तरकी कथाके अन्तर्गत

देवीमाहात्म्यमें 'शुम्भ-वध' नामक दसवाँ

अध्याय पूरा हुआ ॥ १० ॥